बरगद की छाँव में

(ललित गद्य)

अंता की स्मृतियां पीछा नहीं छोड़ती, इसके नेपथ्य में एक ही कारण हो सकता है, कि मेरा नाभिनाल वहां कटा। सीसवाली रोड़ पर रेलवे फाटक के पास एक बरगद का विशाल पेड़ है।

इसके पास ही कुआं भी है। उसके नीचे बैठकर ट्रेन के चालक से हाथ हिलाकर टाटा किया है।

और वे मुस्कुराकर सीटी बजाते चले जाते हैं। वह क्षण एक बच्चे के लिए किसी उत्सव से कम न था। जन्म और भूमि का यह अदृश्य बंधन मनुष्य के मनोविज्ञान में इतनी गहराई तक उतर जाता है कि समय की धूल भी उसे म्लान नहीं कर पाती बरगद का विशाल वृक्ष आज भी मेरी चेतना के किसी कोने में हरा है। उसकी जटाओं में जैसे समय की नसें बहती थीं।

वटवृक्ष की लटकती जड़ों से हिंडोला झूला है। उसमें असंख्य पक्षियों का बसेरा होता था। कई जानवर अपनी पीठ खुजलाया करते थे। गर्मी की दुपहरी में उसके नीचे बैठकर कुएं का ठंडा पानी पीकर तन और मन कितना शांत होता था, उसकी कल्पना करना एक पहेली का पीछा करना जैसा है। उस बचपन के असीम आनंद की कल्पना अब दुरूह है। अब समय ने उसे वनवास पर भेज दिया है।

यहां आनंद शब्द बेमानी हो सकता है, क्योंकि आनंद चिरस्थाई भाव है। हां उसे सुख कह सकते हैं, लेकिन उसमें भी एक समस्या यह है, कि सुख क्षणिक होता है। आनंद दार्शनिक शब्द है और सुख लौकिक। लेकिन मेरे लिए वह समय आनंद का ही था, जिसका असर आज तक मेरे मनोविज्ञान पर चिरस्थाई आबद्ध है। हम इस प्रकृति को सचिदानंद कहते हैं। मनुष्य के पास केवल सत् और चित होता है, आनंद तिरोभाव होता है। उसे प्राप्त करने के लिए कितने ही ऋषि मुनि काल कवलित हो गए, पर उसे प्राप्त करना बड़ा मुश्किल है। वे केवल अपना अनुभव बताकर नेति नेती कहकर चले गए। फिर भी मनुष्य के लिए आनंद एक पहेली जैसा ही रहा। मैं तो यह समझ पाया हूँ, कि एक बालक की निश्चल हँसी में जो आनंद है, वह बड़ों की हँसी में नहीं, क्योंकि

बड़े होने पर हँसी में व्यंजना आ जाती है — दिखावा, औपचारिकता या किसी न किसी प्रयोजन की छाया। पर बच्चे की हँसी — वह सीधी आत्मा से निकलती है, जैसे सुबह की पहली किरण पेड़ों पर उतरती है।

निदा फाजली कहते हैं-

घर से मस्जिद है बहुत दूर चलो यूं कर लें,
किसी रोते हुए बच्चे को हँसाया जाये।।

आज मुझे रह रहकर वह वटवृक्ष स्मरण हो रहा है। इस बड़ की जटाओं के नीचे समय की गहराई, पीढ़ियों की यादें और अतीत का स्पर्श महसूस हो रहा है। ऐसा लगता है कि बरगद की जटाएँ धरती में जैसे समय की गहराइयों तक उतर गई हों। उसकी फैली हुई शाखाएँ आकाश से संवाद करती प्रतीत होती हैं और नीचे लटकती जटाएँ मानो पीढ़ियों का हाथ थामे खड़ी हों।

गाँव की चौपाल उसी बरगद के नीचे सजती थी। सुबह की ताज़गी, पत्तों से छनकर आती धूप और शाखों पर चहचहाते तोते, जैसे जीवन (प्रकृति) की धड़कन हों। बच्चे उसकी मोटी जड़ों पर झूला झूलते और हँसते हुए कहते—

“देखो, यह झूला तो आसमान छू लेगा!”

बरगद हौले से अपनी पत्तियों को हिलाकर मानो उन्हें आशीर्वाद देता।

शाम को वही जगह गंभीर हो उठती। बुज़ुर्ग अपनी लाठी टेककर आते और बरगद से टिककर बैठ जाते। किसी की आँखों में बीते हुए युद्ध की यादें होतीं, किसी के स्वर में लोकगीत की गूँज होती। वे अक्सर बरगद से कहते—"तेरे नीचे ही तो हमारी पीढ़ियाँ पली-बढ़ीं हैं।

तू ही हमारी कहानियों का साक्षी है।"

बरगद निश्चल खड़ा सुनता रहता इन सभी बातें। उसकी जटाएँ कभी धीरे-धीरे हिलतीं, जैसे सहमति में सिर हिलाकर कह रही हों—

"हाँ, मैंने सब देखा है... तुम्हारे बचपन की किलकारियाँ, तुम्हारी जवानी की आहटें और बुढ़ापे की साँसें।"

बरगद की छाँव में बैठने पर लगता है मानो समय ठहर गया हो। वहाँ हवा भी धीरे चलती है, जैसे अतीत की परतों को खोलना चाहती हो। उसकी जटाएँ धूल से सनी हुई हों, पर उनमें वर्षों का अनुभव चमकता है।

मेरे गुरुदेव डॉ. शशिप्रकाश चौधरी को मैंने कई बार पेड़ों के पास जाकर उनके तनों को दबाते देखा है। जैसे किसी बुजुर्ग के पैरों को दबा रहे हों और उनके मुँह से कुछ अस्पुट शब्द बाहर आते से प्रतीत होते हैं। शायद वे उस पेड़ कहना चाहते हों कि हे बरगद बाबा! तुमने जिस प्रकार से पुरानी पीढ़ी को अभय दान दिया है, हमें भी दो। जीवन जीने की लालसा में हम जिए जा रहे हैं, पर सार्थक और नैतिक जीवन जिएं, इस बात का हौसला भी वट बाबा से मांगते हैं।

आज जब गाँव बदल रहा है, कच्चे घर पक्की दीवारों में ढल रहे हैं, चौपाल की जगह मोबाइल की स्क्रीन ने ले ली है—तब भी बरगद अपनी जगह अडिग खड़ा है स्थितप्रज्ञ। उसकी छाँव में बैठते ही यह एहसास होता है, कि जीवन बदल सकता है, लोग बदल सकते हैं, लेकिन स्मृतियों की जड़ें उतनी ही गहरी रहती हैं, जितनी बरगद की जटाएँ।

बरगद हमें यह सिखाता है कि समय का प्रवाह चाहे जैसा हो, स्मृतियाँ और परंपराएँ कभी नहीं मिटतीं। वे जटाओं की तरह धरती में गहरी उतरकर हमें अतीत से जोड़ती रहती हैं।

बरगद की छाँव—मानो समय का अनंत वितान। उसकी फैली हुई डालियाँ जैसे आकाश को अपने आगोश में समेट लेना चाहती हैं और धरती में धँसी हुई जटाएँ किसी माँ के आँचल-सी गहराई का आभास देती हैं। वहाँ बैठते ही मन पर एक अदृश्य शांति उतर आती है—जैसे कोई पुराना, निस्वार्थ मित्र सिर पर हाथ रखकर कह रहा हो—"थक गए हो? आओ, पलभर ठहरो।"

गाँव की साँसें प्रायः बरगद की छाँव में ही सुनाई देती हैं। चौपाल के फुसफुसाते स्वर, बूढ़ों के अनुभव, बच्चों की किलकारियाँ, औरतों की धीमी हँसी, कहीं दूर से आती बैलों की घंटियों की टनटनाहट—ये सब मिलकर बरगद को जीवंत कर देते हैं।

दोपहर की तपती धूप से थका किसान बैलगाड़ी रोककर जब छाँव में बैठता था, तो उसकी आँखों में अनकही राहत झलकती थी। वहीं कुएँ से लौटती औरतें घड़े रखकर एक-दूसरे से गीत की पंक्तियाँ बाँट लेती थी—

"बरगद तले झूला पड़े, सखियाँ सावन गाएँ..."

उन गीतों में मेघों की गहराई, पवन की मधुरता और जीवन की थिरकन घुली रहती है।

ऋतुएँ आती-जाती हैं और बरगद अपनी छाँव में उनके रंग समेटता चलता है। ग्रीष्म की दुपहरी में उसकी छाया जलती धूप पर ठंडी चादर-सी बिछा देती है।

सावन में उसकी डालियाँ झूमती हैं, और जटाओं पर पत्तों की बूँदें मोतियों-सी चमकती हैं।

शरद की धूप जब पत्तियों से छनकर आती है, तो लगता है जैसे सोने के सिक्के जमीन पर बरस रहे हों।

बसंत आते ही हरीतिमा का नया वस्त्र ओढ़कर बरगद युवावस्था में लौट आता है और शीत ऋतु में धुंध का कोमल आलिंगन उसकी जटाओं पर उतरकर उसे किसी ऋषि की गहन ध्यानस्थ मुद्रा में ढाल देता है।

बरगद केवल वृक्ष नहीं, वह स्मृतियों का भंडार है। उसकी जटाओं में उलझी हैं अनगिनत कहानियाँ—किसी दादी की परीकथा, किसी साधु का मौन तप, किसी किसान का श्रमगीत, किसी बच्चे की मासूम खिलखिलाहट। वह सब सुनता है,

सहेजता है, और पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ा देता है। बरगद का तना मानो एक ग्रंथ है, जिसकी छाल पर समय की लिखावट उकेरी हुई है। उसकी छाँव में बैठकर हम सीखते हैं कि स्थायित्व किसे कहते हैं। आंधियाँ आएँ, ऋतुएँ बदलें, पर यदि जड़ें गहरी हों, तो कोई तूफ़ान हमें गिरा नहीं सकता। बरगद हमें यही शिक्षा देता है—कि संस्कृति, परंपरा और स्मृतियाँ ही जीवन की जड़ें हैं, और इन्हीं में स्थायित्व का आधार छिपा है।

गाँव के लोकगीतों में बरगद का नाम अक्सर पिता की छाया, गुरु की गंभीरता और समय की दीर्घायु के रूप में आता है। बरगद की छाँव में बैठा हर व्यक्ति जब उठता है, तो अपने भीतर कुछ और अधिक शांति, थोड़ी और परिपक्वता, और बहुत-सा अपनापन लेकर लौटता है। बरगद की छाँव में जीवन का दर्शन है—सहारा, स्थायित्व, सामूहिकता और स्मृति वह हमें पुकारती है—

“आओ, मेरे नीचे ठहरो। यहाँ तुम्हारे बचपन की हँसी है, माँ की लोरी है, दादी की कहानी है, किसान की थकान है, और भविष्य की आशा भी है।”

बरगद तुम इसी प्रकार से इस प्रकृति में छाया, शांति और स्थितप्रज्ञता का प्रसार करते रहो, ताकि ये जगत तुम्हारे गुणों को अपनाकर उपकार का मार्ग परस्त करता रहे। ये संसार यह सीखता रहे कि समानता, दया, करुणा, सौहार्द्ध आदि गुणों को कैसे आगे बढ़ाया जाता है- अविरल..... निर्निमेष....।

डॉ. नन्द किशोर महावर
कोटा (राज.)
- 9413651856

आलेख - गांव ही हमारे जीवन का आधार है

हम भले ही चाहें अपनी नौकरी या व्यवसाय के लिए दुनिया के किसी भी कोने में चले जाएं मगर हमारा गांव हमें सदा याद आता है गांव से हमारी जिंदगी को गति मिलती है गांव की मिट्टी से हमारा गहरा नाता होता है और गांव की मिट्टी से ही हमारा भविष्य महकता है हमारे गांव के बचपन के पुराने मित्रों से जब कभी मिलते हैं उन से पुरानी बातें करते तो हमारी पुरानी यादें ताजा हो जाती है और दिल में बहुत खुशी होती है वो स्कूल टाइम की किस्से जब हमें याद करते हैं तो हमें फिर से बचपन में लोट जाते हैं आज भी हमारी गांव की मिट्टी से हमें बहुत प्रेम और लगाव रहता है हमारे गांव परिवार के बुजुर्गो का चेहरा याद आता है उनकी हर बात और संस्कार याद आते हैं हमें उनके दिए गए सभ्यता और संस्कारों पर चलना चाहिए हमारे बच्चों का तो जन्म तो शहर मैं हुआ है उनको गांव की हर बातें पुरानी यादें बुजुर्गो की हर प्रेरणादायक बातें और हमारे गांव की सभ्यता संस्कृति से जरूर अवगत करना चाहिए हमारे गांव में कैसे त्योहारों को मनाया जाता है हमारे गांव की परंपरा और रीति-रिवाज के बारे में जरूर बताना चाहिए ताकि हमारे गांव की मिट्टी से यह युवा पीढ़ी भी जुड़ी रहें और हमारे बच्चों के मन में हमारे गांव और बुजुर्गो के प्रति प्रेम भाव बना रहे गांव में आज भी हर त्योहार को परंपरागत तरीके से मनाते हैं जब हम अपनी जिंदगी की भागदौड़ से कुछ पल छांट कर हम अपने गांव जाते हैं मन में बहुत खुशी होती है फिर पुरानी यादें ताजा हो जाती है गांव के प्रति हमारा प्रेम भाव बढ़ता है पुराने पीपल का पेड़ आम का बगीचा बहती हुई नदी का किनारा वो गांव की गलियों में आज भी हमारा बचपन नजर आता है।

सुनील गौर (इंदौर ,मध्यप्रदेश)